ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-5* Issue-6* September-2020
Anthology : The Research

बौद्धकालीन दृश्य कलाओं में प्रकृति रूपांकन

Nature Design in Buddhist Visual Arts

Paper Submission: 15/09/2020, Date of Acceptance: 25/09/2020, Date of Publication: 26/09/2020

अनिल गुप्ता
एसोसिएट प्रोफेसर
चित्रकला विभाग
राजस्थान स्कूल ऑफ आर्ट,
जयपुर, राजस्थान भारत

सारांश

प्रकृति मुख्य रूप से पांच तत्वों से मिलकर बनी है जल, पृथ्वी, अग्नि, वायु, आकाश। इन पांच तत्वों में एक की भी कमी आने पर प्रकृति पर संतुलन बिगड जाता है। ''पृथ्वी पर उपलब्ध वे सभी तत्व जो मनुष्य द्वारा निर्मित नहीं हैं वे सभी प्रकृति के ही अंग हैं जैसे– सूर्य, पेड़, पौधे, पुष्प, पशु–पक्षी इत्यादि'' इन प्रकृति रूपों का कला में विशेष महत्व रहा है।

Nature is mainly composed of five elements: water, earth, fire, air, sky. The balance on nature deteriorates when there is even a lack of one of these five elements. "All the elements available on the earth which are not created by human beings are all part of nature, such as the sun, trees, plants, flowers, animals, birds etc." These nature forms have special importance in art.

मुख्य शब्द : बौद्धकालीन दृश्य, प्रकृति, ब्राह्मण, जैन, बौद्ध।
Buddhist view, nature, Brahmin, Jain, Buddhist.

प्रस्तावना

जब से आदि मानव का स्वयं से परिचय हुआ तब से स्वयं को प्रकृति की गोद में पाया तथा इसी की गोद में रहकर अपना विकास किया जिसके फलस्वरूप मनुष्य का प्रकृति से अटूट रिश्ता बन गया। यही कारण है कि भारतीय धर्म तथा कला में प्रारम्भ से ही मनुष्य तथा प्रकृति जगत के बीच सम्बन्ध और सन्तुलन बनाये रखा है। मनुष्य ही नही देवी देवताओं ने भी प्रकृति के विभिन्न रूपों को अपने आप से जोड़ कर प्रकृति रूपों को विशिष्ट अर्थ प्रदान किया है। ब्राह्मण, जैन, बौद्ध तीनों ही परम्पराओं में देवी देवताओं को विभिन्न वृक्षों, वाहनों के रूप में पशु–पक्षियों तथा आसन के रूप में पुष्प से संबंधित किया है।

बुद्ध तथा जैन तीर्थकरों को किसी न किसी वृक्ष के नीचे ज्ञान प्राप्त हुआ। सभी आराध्य देवों के वाहनों के रूप ने विभिन्न पशु–पक्षियों की कल्पना की गई जैसे – विष्णु का वाहन गरूड़, गणेश के साथ मूषक तथा शिव के साथ बैल आदि।

बौद्धकालीन दृश्य कलाओं में इन प्रकृति रूपों (जल, सूर्य, अग्नि, पशु, पक्षी, वृक्ष, पुष्प) का विशिष्ट स्थान है। अजन्ता, बाघ, सांची, भरहुत, अमरावती, नागार्जुनकोण्डा इत्यादि बौद्धकला केन्द्रों में इन प्रकृति रूपों का धार्मिक महत्व के साथ–साथ सज्जा में प्रचुरता से प्रयोग किया गया है।

अध्ययन का उददेश्य

''बौद्धकालीन दृश्य कलाओं में प्रकृति रूपांकन'' विषय लेने का मेरा उद्देश्य यही रहा है कि मैं आज के समाज को यह दर्शाना चाहता हूँ कि पुरातन काल से हमारे समाज में प्रकृति प्रेम व उसकी आराधना को बहुत अधिक महत्व दिया गया है जो आज प्रायः नगण्य होता जा रहा है। आज इसी कारण विभिन्न प्राकृतिक आपदाओं यथा सूखा, बाढ़, अकाल आदि से हमें जूझना पड़ रहा है।

हमारे देश में प्रकृति की पूजा की जाती थी ताकि समस्त समाज भय से या आस्था स्वरूप उसकी यथोचित देखभाल कर सके।

जल

जल प्रकृति का महत्वपूर्ण तत्व है। जल का अंकन मुख्यतः नदियों, तालाब, सरोवर, झील के रूप में किया गया है। उपासना स्थल के द्वार के दोनों ओर गंगा और यमुना जल देवियाँ मकर तथा कूर्म के ऊपर दर्शायी गई हैं। जल की धार्मिक क्रियाओं में महत्ता को ध्यान में रखते हुये जल के प्रतीक के रूप में कलश का प्रयोग किया गया है। बुद्ध के जीवन से संबंधित विभिन्न जातक कथाओं (छदन्त जातक, हस्ति जातक, महाहंस जातक, महाकपि जातक आदि) में

जल का अंकन नदी के रूप में सरोवर के रूप में दिखाया गया है। छदन्त जातक कथा में घने जंगल में हाथियों को जल क्रीड़ा में मग्न अंकित किया गया है। सांची के पश्चिमी तोरण द्वार पर जल को दिखाने के लिये लहर दार रेखाओं का प्रयोग किया गया है।

जल के प्रतीक स्वरूप कलश का अंकन हमें विभिन्न रूपों में भरहुत, सांची, अमरावती, मथुरा, सारनाथ, नागार्जुनकोण्ड, बोध गया आदि विभिन्न स्थानों के उत्कीर्ण शिल्पों में मिलता है।

पूर्णकलश में भरा जल जीवन का रस है वेदों में इसे सोम, अमृत, घृत से परिपूर्ण कहा गया है। पदम और लक्ष्मी दोनों का जन्म जल से माना जाता है। भारतीय कलाकार ने कलश का उपयोग भी बहुविधि किया है। जैसे – पदम गुच्छ से परिपूर्ण कलश, श्री लक्ष्मी के पदमासन का आधार कलश, स्तम्भ का आधार शीर्ष कलश, हाथी से अभिसिंचित कलश आदि का अंकन बौद्ध कालिन दृश्य कला केन्द्रों में पाया गया है।

पूर्णकलश लिए हुए कन्या अथवा नारी को भी मांगलिक माना गया है। भरहुत से कुछ ऐसे अभिप्राय प्राप्त हुए हैं जिनका सम्बन्ध जल तत्व से था और वे अपोमयी सृष्टि के प्रतीक समझे जाते थे जैसे वृषमच्छ अर्थात् मछली की पूंछ वाले बैल शिशुमारशिर, कुम्भोदर यक्ष के मुख या नाभि से निकली हुई कमल की लता, देवी के चारो ओर समर्पित कमल माला आदि इन अभिप्रायों का समुद्र अथवा जल से घनिष्ठ सम्बन्ध था।

सूर्य

बुद्ध उस विराट पुरूष के प्रतिनिधि थे जो सूर्यमण्डल का अधिष्ठाता है। बुद्ध सूर्य वंश के इक्ष्वाकु कुल में उत्पन्न हुए थे और इस दृष्टि से वे सूर्य की विराट शक्ति से सम्बन्धित थे। सूर्य प्रकृति का एक महत्वपूर्ण अंग है। सूर्य से प्रकृति संचालित होती है। सूर्य के प्रतीक रूप में चक्र का निर्माण किया गया है। चक्र अकेले भारत में ही नही वरन् संसार के अन्य देशों में भी सूर्य भगवान का प्रतीक माना गया और चक्र के रूप में ही सूर्य की पूजा की गयी। सूर्य है भी एक चक्र के समान सूर्य गति और काल का प्रतीक है। इसलिये चक्र भी गति और काल का बोध कराता है। सृजन, पालन और संहार के द्वारा सृष्टि का चक्र अनवरत प्रवाहमान रहता है। यही जीवन चक्र है बौद्ध कला में सूर्य (चक्र) का बड़ा महत्व रहा है। महात्मा गौतम बुद्ध के द्वारा दिया गया पहला प्रवचन, धर्म चक्र प्रर्वतन के नाम से प्रसिद्ध है। चक्र मुख्य रूप से बुद्ध के प्रथम प्रवचन का और सामान्य रूप से स्वयं बुद्ध का प्रतीक मान लिया गया था।

सांची, भरहुत, सारनाथ, बोध गया, मथुरा, अमरावती, नागार्जुन कोण्ड आदि स्थानों के बौद्ध शिल्प में धर्मचक्र कही किसी स्तम्भ पर शीर्ष के रूप में सुशोभित है तो कही आसन अथवा त्रिरत्न पर प्रतिष्ठित है। सांची शिल्प में चक्र के विविध रूप उत्कीर्ण किये गये हैं। सांची शिल्प में हस्ति, सिंह शीर्ष के ऊपर धर्मचक्र स्थापित दिखाये गये हैं। कभी कभी इनकी परिधि का किनारा त्रिरत्न, पदम दलो से भी अंलकृत किया है। इन चक्रो के ऊपर छत्र तान दिये गये हैं। उन पर मालाऐं लटगायी गयी हैं। दोनों पार्श्वों में खड़े नर–नारी या तो हाथ जोड़कर उनकी पूजा कर रहे हैं अथवा माल्यार्पण कर रहे हैं।

धर्म तथा बुद्ध का प्रतीक चक्र भारतीय बौद्ध कला में अंकित त्रिरत्न प्रतीक के अन्तर्गत चक्र तथा त्रिशुल का अंकन है। पदमासन अथवा पदमचक्र के आधार पर त्रिशूल को आसीन दिखाा गया है। कानिंघम की दृष्टि में चक्र बुद्ध का प्रतीक था त्रिशुल धर्म का और दोनों का सम्मिलित स्वरूप त्रिरत्न था। जो संघ का प्रतीक था।

अग्नि

सूर्य की प्राणमयी शक्ति अग्नि का रूप थी। गांधार क्षेत्र में भी बुद्ध की ऐसी मूर्तियां मिली है जिनमें उनके कंधों से लपटे निकल रही है। अजन्ता गुफा–10 में बुद्ध का एक रोचक चित्र है जिसमें उनकी आभा से लपटे उठती हुई दिखाई गई हैं। अग्नि ज्ञानाग्नि का प्रतीक है। बुद्ध के चारों ओर से निकलने वाली लपटे उनके अध्यात्मिक प्रकाश का प्रतीक है और अज्ञान के अंधकार को दूर कर रही है। अमरावती में बुद्ध की पूजा अग्नि स्तम्भ के रूप में मिलती है।

पशु–पक्षियों का अंकन

पशु–पक्षी प्रकृति का एक महत्वपूर्ण अंग है। इसी कारण बौद्ध कला भारतीय चित्रकला व शिल्पों में इसे पर्याप्त स्थान दिया गया है।

अजन्ताकी गुफाओं में पशु–पक्षियों के चित्रण में आत्मा का वही विकास दिखाई देता है जो मानवीय आकृति के चित्रण में है।

जीवन प्रेम और सहानुभूति के उत्तम चित्र उदाहरणों में महाहंस जातक, चम्पेय जातक, हस्ती जातक आदि में कलाकार ने पशु–पक्षियों जैसी आत्मा का अनुभव किया और जीवन को मानव समान माना।

बौद्ध धर्म की अहिंसा और बुद्ध के पूर्व जन्म की कथाओं जिनमें वह कभी बौधित्व, पशु–पक्षियों के रूप में अवतीर्ण हुए के कारण भी बौद्ध दर्शन में जीवन के प्रति आदर, दया, सहानुभूति आदि तत्व विद्यमान थे। इसका प्रभाव कला पर पड़ा। कलाकार ने जीवन को समादर, सहानुभूति और संवेदना से देखा। जिनमें मुख्यतः हाथी, घोड़ा, हिरण, बंदर, मगरमच्छ, सर्प, हंस, मछली, बाज, बैल, चिंटी, तोता, बतख आदि को उनकी स्वाभाविक उन्मुक्तता के साथ चित्रित किया गया है।

इसके अतिरिक्त विभिन्न आलेखनों अलंकरणों में भी पशु–पक्षियों जलचरो को महत्व दिया गया है। भरहुत के स्तुप के तोरण द्वार पर मकराकृति को आकर्षक ढंग से संजोया गया है।

कलाकार ने फूलों तथा पेड़ पौधो के बीच के स्थलों में पशु–पक्षियों का अंकन किया है। मौर्यकाल में पशुओं का पर्याप्त अंकन देखने को मिलता है। जिनमें वैशाली का सिंह शीर्षक, संकिसा का हस्ती शीर्षक, रामपुरवा का वृष शीर्षक, सारनाथ का सिंह शीर्षक स्तम्भ प्रमुख उदाहरण है। शुंगकाल में सांची, भरहुत के स्तूपों में विभिनन पशुओं की आकृति का अंकन है। पशुओं की आकृतियां दो प्रकार की है। स्वभाविक व कल्पित। काल्पनिक पशुओं में व्याल पशु आकृति प्रमुख है।

सांची स्तूप के तोरण द्वार विभिन्न पशुओं से अलंकृत है। जिनमें सिंह, हाथी, घोड़ा, मृग, पशु आकृति प्रमुख है।

गांधार कला में पशु–पक्षियों का मनोहारी अंकन देखने को मिलता है। जिनमें अप्सराओं को पक्षियों से क्रीड़ा करते दिखाया गया है। हंसक्रीड़ा, शुक्रक्रीड़ा करती अप्सराएं दिखायी गयी है। इसके अतिरिक्त गजपंक्ति, हंसपक्ति आदि प्रमुख हैं।

अमरावती स्तूप में दो पशु–पक्षी को एक साथ चित्रित किया गया है। जैसे – श्येन व्याल अर्थात्, गरूड़ मस्तक के साथ सिंह शरीर की आकृतियां बलिष्ठ और प्रभावशाली है। शुंगकालीन मथुरा कला में पुच्छल पशुओं का अंकन देखने का मिलता है। जैसे पुच्छल ईहमृग, व्याघ्रमच्छ आदि।

नाग

भारत में प्राकृतिक शक्तियां जैसे जल निवासी सर्पदेवता, नाग को पूजने की परम्परा रही है। पितलखोरा, नासिक की हीनयान गुफाओ में नागो को पशुमानस रूप में चित्रित किया है।

अजन्ता में नागों का चित्रण बाहर की प्रवेश विथि में भवनारोधको के रूप में तथा बुद्ध की प्रतिमा वाले आंतरिक कक्षों में है। नागों को कही पर आकाश में उड़ते हुए कही पर स्तूप पूजा करते हुए कही पर नाग नागिन को एक साथ, कही पानी में चित्रित किया है। शंखपाल जातक आदि में नागों तथा उनके निवासी की भव्यता के उत्कृष्ट उदाहरण मिलते हैं।

वस्त्र सज्जा में पशु–पक्षियों का प्रयोग देखा जा सकता है। अजन्ता गुफा–1 में एक स्त्री के वस्त्र पर हंसों की पंक्ति अंकित हैं।

फूलों का अंकन

बौद्धकालीन दृश्य कलाओं में हमें विभिन्न फूलों का अंकन मुख्य रूप से धार्मिक महत्व के दृश्यों में बुद्ध के जीवन से संबंधित दृश्यों में अभिप्रायों में अलंकरण में देखने को मिलता है। अजन्ता की गुफा में मुख्य रूप से कमल, कुमुदनी, चमेली, लीली के फूल देखे जा सकते हैं। लेकिन मुख्य रूप से कमल पुष्प की अधिकता दिखलाई देती है। अजन्ता के कलाकारों ने कमल का प्रयोग दैवित्व भाव व पवित्रता के प्रतीक के स्वरूप किया है। कमल युक्त पतली लताए जिसमें कलियां या खिले पुष्प है वे जीवन, मृत्यु के सनातन चक्र को भी प्रदर्शित करते नजर आते हैं। अजन्ता की गुफाओं में कल को स्वभाविक रूप में, सरोवर में उगते हुए, कहीं–कहीं पर सज्जा के रूप में इसका व्यापक प्रयोग किया गया है। वहीं सांची, भरहुत, अमरावती नागार्जुनकोण्ड, मथुरा, सारनाथ कला केन्द्रों में अलंकरण में साज सज्जा में पदम को महत्व दिया गया है। पदम भारतीय प्रतीक है। भारतीय साहित्य दर्शन कला का यह एक महत्वपूर्ण अभिप्राय है। यह पृथ्वी का प्रतीक है।

पदम पुराण में यह कहा गया है कि विष्णु की नाभि से जो पदम पहले उत्पन्न हुआ वह पृथ्वी रूप था। पृथ्वी सम्पूर्ण चराचर जगत को जन्म देती है। इसलिए पदम सृष्टि का प्रतीक है।

पदम लक्ष्मी का आसन माना गया है। बिना पदम के लक्ष्मी की परिकल्पना तक संभव नहीं। लक्ष्मी को इसलिए पदि्मनी, पदमवर्णा, पदमप्रिया कहा गया है। बौध कला का दर्शन करने से ऐसा विदित होता है कि समस्त कलाकारों ने अलकंरण में विशेषकर पुष्पलताओं, पदमदलों के रूप में उपलब्ध होते हैं। पूर्ण विकसित अथवा अर्द्ध विकसित पदम सरोवरों व अभिप्रायों में देखे जा सकते हैं। फूल–पत्तियों की बेलों में पशु–पक्षियों का संयोजन उचित रीति से किया गया है। पूर्णघट अथवा मंगल कलश में पदमगुच्छ के मनोहरी रूप सांची भरहुत, अमरावती के शिल्प में सहज उपलब्ध है। कही कहीं मंगलकलश से प्रस्फुरित पदम पीठ पर लक्ष्मी आसीन है।

सांची शिल्प में अनेक संभ्रान्त नर नारियों के हाथों में पदम दिखाई देता है। पुष्प धारण करना उस युग के नागरिक जीवन का एक महत्वपूर्ण पहलु था। अजन्ता की गुफा में पदमपाणी बुध के हाथों में कमल पुष्प दिखाया गया है। पूजा करते नर–नारियों की पूजा सामग्री में पुष्पों को पवित्र स्वरूप दिखाया गया है। भरहुत–स्तूप के वेदिका स्तम्भों के चक्र फलकों में भांति के पदुमक फुल्ले उत्कीर्ण किये गए हैं सांची भरहुत मथुरा बौद्ध शिल्प में जीवनबेली अथवा कल्पलताओं के बहु अंकन मिले उनमें भी पदम के विभिन्न रूप दिखाये गये हैं। पदम की कई किस्में होती है जो प्राय उनके भिन्न–भिन्न रंगों के आधार पर जानी जाती है। जैसे पुण्डरीक श्वेतकमल, रक्तकमल, नीलोत्पल या नीलकमल। चित्रकला में पदम की इन किस्मों की पहचान तो संभव है पर मूर्तिशिल्प में यह संभव नहीं है।

वृक्ष, पेड़, तलाओं का अंकन

भारतीय सभ्यता में आरम्भ से ही वृक्षों, पेड़ों को पूजने की परम्परा रही है। इसी कारण हमें विभिनन धार्मिक स्थलों, कला केन्द्रों पर पेड़ों, वृक्षों के विभिन्न रूपों का अंकन दिखायी देता है।

अजन्ता की गुफाओं में प्रकृति की विविध हरियाली या रूपों में अशोक, साल, आम्र, बरगद, पीपल, ताडद्य, गूलर, कदली आदि पेड़ों का सुन्दर समन्वय हुआ है। उदाहरण :– छदन्त के चित्र में गजराज की शोभा, प्रकृति, वैभव, उन्मुक्तता का बखूबी अंकन है।

बोधिवृक्ष, श्री वृक्ष तथा ज्ञान वृक्ष रूप में वृक्ष भारतीय साहित्य और कला का एक अनुपम अभिप्राय रहा है। प्राचीन भारत में सर्वत्र वृक्षों की महता स्वीकार की गई थी तथा देवताओं के समान इनकी पूजा दीर्घकाल से की जाती रही है। वृक्ष, लताएं प्रकृति के अविभाज्य अंग है। इसलिए वृक्षों, लताओं का आंकलन भारतीय कला का एक रोचक और महत्वपूर्ण विषय रहा है।

भारत में जिन वृक्षों को पवित्र व धार्मिक स्वरूप प्रदान किया गया था उनमें 'पीपल' सर्पोपरि है। ज्ञानवृत, बोधि वृद्ध के रूप में पीपल का भारत में अन्यत्र प्राचीन काल से महत्व रहा है। गौतम सिद्धार्थ को बोध गया में पीपल (अश्वत्व) वृक्ष के नीचे ही बुद्धत्व की प्राप्ति हुई थी। तभी बौद्ध साहित्य में उसे बौधि वृक्ष की संज्ञा मिली।

बौद्ध कला में बोधि वृक्ष के नीचे अनेक अंकन भरहुत, सांची, बोधगया, मथुरा, अमरावती, नागार्जुनकोण्ड के उत्तीर्ण शिल्प में देखे जाते हैं।

बौद्ध मान्यता के अनुसार अलग–अलग बुद्धों को अलग–अलग वृक्षों के नीचे बुद्धत्व प्राप्त हुआ था जैसे – गौतम को अश्वान्ध अथवा पीपल के नीचे, क्रकुच्छन्द को सिरीष के नीचे, कनक मुनि को उदुम्बर के नीचे, कश्यप को न्यग्रोध के नीचे, पिश्यिन को पाटलि के नीचे, शिखिन को पुण्डरीक के नीचे और विश्वभू को शाल के नीचेसांची के विशाल स्तूप के उत्तरी तोरण की बीच की बडेरी के अग्र भाग पर तथा पूर्वी तोरण की ऊपरी बडेरी के पृष्ठ भाग पर उपर्युक्त सात बुद्धों का अंकन उनके वृक्षों के माध्यम से किया गया है।

इसके अलावा कल्पवृक्षों, कल्पलताओ के अंक भी बौद्ध शिल्प में प्राप्त होते हैं। शालभंजिका मूर्ति शिल्पों में भी तरूणी को एक वृक्ष के नीचे त्रिभंग मुद्रा में खड़े अंकित किया गया है। तरूणी प्राय अपने एक हाथ में वृक्ष की एक शाखा को पकड़ कर झूलती सी दिखाई देती है। कभी–कभी वृक्ष के फूल, फल, पक्षी पकड़े हुए भी अंकित की गयी है। कभी–कभी वृक्ष के नीचे खड़ी आंलिगन करती प्रतीत होती है। शुंगकाल में वृक्ष लताओं की विविधता देखने को मिलती है।

आकाश

आकाश को दिखाने के लिए कलाकारों ने मुख्यतः बादलों को अंकित किया है। पक्षियों को, गंधर्वो, अप्सराओं को उसमें उड़ते हुए प्रदर्शित किया है। अजन्ता की गुफा–17 में उड़ती हुई गंधर्व अप्सराएं तथा इन्द्र का अंकन में आकाश का मनोहारी दृश्य अंकित है।

उपहंसहार

छठी शताब्दी ई.पू. विश्व के इतिहास में क्रांतिकारी युग माना जाता है। यह समय बौद्धिक एवं आध्यात्मिक उथल–पुथल का युग था। प्रत्येक देश में ऐसे मननशील विचारकों का प्रादुर्भाव हुआ। जिन्होंने लौकिक व पारलौकिक सभी समस्याओं का गहन चिन्तन किया। चीन में कन्फ्यूशियस, ईरान में जरथुस्त्र, भारत में महावीर स्वामी, गौतम बुद्ध इस क्रांति के प्रणेता रहे।

बौद्ध धर्म का प्रतिनिधित्व गौतम बुद्ध द्वारा हुआ। सत्य, अहिंसा, प्रेम, करूणा आदि विशेषताओं को लेकर बौद्ध धर्म ने सभी को अपनी ओर आकर्षित किया। विशेष रूप से सम्राट अशोक को जिसने बौद्ध धर्म अपनाकर आजीवन युद्ध न करने का प्रण लिया तथा बौद्ध धर्म का प्रचार–प्रसार हेतु स्तूपों, स्तम्भों का निर्माण करवाया।

बौद्ध कला में चित्र, स्थापत्य, शिल्प की त्रिवेणी का एक साथ दर्शन होता है। जिसके प्रमुख उदाहरण हमें मौर्यकालीन स्तम्भों, सांची, भरहुत, अमरावती, नागार्जुन, कोण्ड आदि स्तूपों में अजन्ता, कन्हेरी, बाघ, जुन्त्रार गुफाओं, चैत्य विहारों में देखने को मिलते हैं।

महात्मा बुद्ध की प्रतिमा बनने से पूर्व बुद्ध के प्रतीक स्वरूप, छत्र, पादुका, धर्म चक्र, बोधिवृक्ष इत्यादि का अंकन किया गया इसके पश्चात् मथुरा के शिल्पियों ने ही सर्वप्रथम बुद्ध प्रतिमा का निर्माण किया। गंधार कला में भी बुद्ध के विविध स्वरूपों की मूर्तियां प्राप्त हुई है।

यदि हम बौद्ध कला के प्रमुख स्तूपों, गुफाओं, चैत्य विहारों का परिशीलन करे तो पायेंगे कि बौद्ध कला का प्रकृति जगत से गहरा संबंध रहा है। यहाँ पर प्रकृति जगत के विधि रूपों को विशिष्ट महत्व दिया गया है।

धार्मिक मान्यताओं के अनुसार बुद्ध के मानव योनि में जन्म लेने से पूर्व विभिन्न पशु–पक्षियों की योनियों में जन्म लिया था। इस कारण भी शिल्पियों ने पशु पक्षियों के चित्रण में विशेष रूचि ली। प्रकृति रूपों को प्रतीकात्मक महत्व देकर भी चित्रण किया है। जैसे – सारनाथ स्तमभ में गर्जना करते हुए सिंह अशोक की शक्ति, शौर्य को प्रदर्शित करते नजर आते हैं। बुद्ध के विभिन्न स्वरूपों के प्रतीक स्वरूप अलग–अलग वृक्षों का अंकन, जल के प्रतीक स्वरूप कलश, जल देवियों का अंकन इत्यादि।

बाघ अजन्ता के कलाकारों ने पशु पक्षियों, पुष्प, लताओं के चित्रण में आत्मा का वही विकास किया है जो मानवाकृति चित्रण में। बुद्ध के जीवन से संबंधित दृश्यों, जातक कथाओं (हंस जातक, मृग जातक, छदन्त जातक, हस्ति जातक, महाकपि जातक, मातृपोष जातक, चम्पेय जातक इत्यादि) में कलाकार ने पशु पक्षियों के चित्रण में अपनी जैसी आत्मा का विकास किया।

बौद्ध कला के विकास में शुंगसातवाहन काल स्वर्ण काल की दृष्टि से देखा गया है। गुप्तकाल के पश्चात् इसके विकास में कमी नजर आती है। क्योंकि इस समय ब्राह्मण धर्म का प्रभुत्व वापस बढ़ने लगा। हिन्दु मंदिरों, मूर्तियों का निर्माण अधिक होने लग गया। इसके अलावा इस्लामियों के आगमन व उनकी धर्म विरोधी नीतियों ने भी हिन्दू व बौद्ध धर्म व कला को पर्याप्त नुकसान पहुंचाया जिससे बौऋ कला पतनोन्मुख होने लगी भले ही समय के कुप्रभावों से बौद्ध धर्म की प्रतिष्ठा में कमी आयी हो लेकिन लोगों की आस्था में आज भी यह पल्लवित हो रही है।

सन्दर्भ ग्रंथः सूची

1. *भारतीय कला, वासुदेव शरण अग्रवाल, प्रथम संस्करण 1266 पृथ्वी प्रकाशन, वाराणसी।*
2. *अजन्ता का वैभव (अनुवाद मरूण प्रकाश) भारत सरकार पटियाला हाऊस, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित।*
3. *सांची स्कल्पचर डॉ. मंजूषी रॉय, एके बुक कॉरपोरेशन, न्यू दिल्ली।*
4. *अजन्ता एलोरा, रंजना सेनगुप्ता हालीवुड रोड, सेन्ट्रल हॉगकांग।*
5. *बुधिस्ट आर्ट इन इण्डिया, जेस बर्गस, कोस्मों पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली।*
6. *अजन्ता म्यूरल, इनग्रिड ए.एल.एल., ए. घोष, कलकत्ता–9.*
7. *भारतीय कला प्रतीक (ए.एल. श्रीवास्तव, प्रथम सस्करण – 1989 अनुराग प्रकाशन, जार्ज टाऊन), इलाहाबाद.*
8. *http://www.squidoo.com/unesco-world heritage.*
9. *http://www.indiamonuments.org/ajanta:htm*